अध्याय– 5 योगचिकित्सा और नृत्यचिकित्सा

5.1 उपचार एवं चिकित्सा के क्षेत्र में भारतीय संस्कृति का योगदान

मन, शरीर और आत्मा को ठीक करने की प्रक्रिया में संस्कृति महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है । कई अध्ययनों ने संकेत दिया है कि धार्मिक अनुष्ठान, प्रार्थना, ध्यान, आंदोलनों के साथ–साथ नृत्य जैसी सांस्कृतिक परंपराओं में चिकित्सीय पहलू है जो किसी के मानसिक, शारीरिक और आध्यात्मिक स्वयं को सकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं । अतीत में और वर्तमान में भारतीय संस्कृति ने कई धार्मिक या आध्यात्मिक रूप से आधारित तकनीकों को शामिल किया है जो लोगों को सामान्य मानसिक स्वास्थ्य के मुद्दो से निपटने में मदद करते हैं । आध्यात्मिकता और मानसिक स्वास्थ्य का एक सामान्य लक्ष्य है ''स्वयं को मुक्त करने और खिलने के लिए भावनात्मक पीड़ा को कम करना'' । धर्म में दृढता से विश्वास करना और पारंपरिक अनुष्ठानों और समारोहों को करने से आशा पैदा होती है जो मानसिक तनाव से कुछ राहत प्रदान करती है । अध्यात्मवाद और धार्मिक भावनाएँ किसी के मन से जुड़ी हुई है । आध्यात्मिक रूप से आधारित अभ्यास को शामिल करना मानसिक बिमारी से निपटने में फायदेमंद हो सकता है । भारत की सबसे प्राचीन तकनीक योग ने वर्तमान में अपने प्रभावशीलता के परिणामस्वरूप लोकप्रियता हासिल की है । मन और शरीर का संबंध योग दर्शन का आधार है । प्राचीन दिनों में और आज भी योग और ध्यान को ईश्वर के साथ प्रार्थना करने और संवाद करने के तरीकों के रूप में किया जाता था । योग अब एकाग्रता और आत्म नियंत्रण में सुधार और शक्ति और शांति प्राप्त करने के इरादे से किया जाता है। सामान्य तौर धार्मिक अभ्यास और मानसिक स्वास्थ्य के बीच अंर्तसंबंध पर जोर दिया जाता है। मानसिक स्वास्थ्य के अभ्यास में धार्मिक अभ्यास को शामिल किया जाना चाहिए । धर्म आधारित संस्थान जैसे – मंदिर, चर्च और मस्जिद मानसिक स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं को दूर करने के लिए मनोचिकित्सा और वैज्ञानिक दृष्टिकोण की समझ को शामिल करके अधिक लोगों को लाभान्वित कर सकते हैं । जैसा कि योग में स्पष्ट है कि भगवान/देवताओं और आध्यात्मिकता में विश्वास अक्सर आंदोलन या नृत्य

के माध्यम से व्यक्त और अभ्यास किया जाता है । वास्तव में अधिकांश भारतीय कला और नृत्य धर्म से प्रेरित है और प्रत्येक क्षेत्र की अपनी विशिष्ट कलात्मक शैली, आध्यात्मिक नृत्य रूप और संस्कृति है । हालांकि ये सभी नृत्य प्रकृति में धार्मिक नहीं है । दूसरों को उत्सव के अवसरों के दौरान मनोरंजन के इरादे से किया जाता है । भारत में सबसे पारंपरिक नृत्य रूपों को शास्त्रीय और लोक नृत्य के रूप में वर्गीकृत किया गया है । भारतीय शास्त्रीय नृत्य औपचारिक और तकनीक से बंधे होते हैं जबकि लोक नृत्य सरल होते हैं और उनमें कच्चेपन की भावना होती है ।

भारत में डी.एम.टी. के अग्रदूतो के अनुसार सांस्कृतिक नृत्य ऐसे तरीके हैं जिनसे लोग खुद को व्यक्त करते हैं और दूसरों के साथ संवाद करते हैं । उनके अनुसार भारतीय शास्त्रीय नृत्यों में 9 रस या भावनाएँ शामिल है जो भावनात्मक अभिव्यक्ति के लिए व्यापक रूप से उपयोग की जाती है अर्थात् प्रेम, हँसी, करूणा, साहस, भय, दुःख, घृणा, आश्चर्य और शांत''। लोक नृत्य एक सांप्रदायिक प्रथा है जिसके दौरान लोग एक साथ मिलते हैं, अपनी परंपराओं को साझा करते हैं और अपने उत्सव समारोहों में खुशी व्यक्त करते हैं। नृत्य के माध्यम से मानव स्वभाव खुशी और दुख को दर्शाता है । आंदोलन न केवल भावनाओं का प्रतिक हो सकते हैं बल्कि वे हमारे आसपास की दुनिया के तत्वों का भी प्रतिनिधित्व कर सकते हैं । आंदोलन पंचबुथा, पांच तत्वो या गठन में सभी आवश्यक आकर्षण को एक साथ लाता है । इन तत्वो में पृथ्वी, अग्नि, जल, वायु और आकाश शामिल है । आंदोलन अपने वास्तविक रूप में प्रकृति का चित्रण है ।

अनुसंधान इंगित करता है कि ऐसे नृत्यों का चिकित्सीय महत्व होता है । उदाहरण के लिए भारतीय दार्शनिकों ने पहचाना कि भारतीय शास्त्रीय नृत्यों की मुद्राएं, आसन या ध्यान मुद्रा पर आधारित होती है । आसन जो योग के अभ्यास का हिस्सा है, सुखदायक और उपचार गुणों को शामिल करते हैं । यह हमें सूचित करता है कि भारतीय शास्त्रीय नृत्य में उपचार के गुण शामिल है । नृत्य , योग और मंत्र शास्त्र का एक संयोजन है । एक आध्यात्मिक और धार्मिक पुस्तक जिसमें प्रार्थना और आध्यात्मिक परिवर्तन के लिए उपयोग किए जाने वाले वाक्यांश शामिल

है । उन्होंने आगे मंत्रों या धार्मिक वाक्यांशों को पढ़ने के लिए मुद्रओं का उपयोग कीया जो हाथ के मुद्राऐं है । सुधाकर ने समझाया कि भरतनाट्यम में मुद्राएं मंत्र शास्त्र में मुद्रा के समान है । इस प्रकार यह दर्शाता है कि भारतीय शास्त्रीय नृत्य में आध्यात्मिक और उपचार प्रभाव शामिल है । उन्होंने समझाया कि भारतीय शास्त्रीय नृत्य में शरीर के अंगों मांसपेशियों की अधिकतम संख्या का उपयोग या स्थानांतरित किया जाता है, जो हृदय को मजबूत करता है । इसलिए उन्होंने सुझाव दिया कि शास्त्रीय नृत्य घटक हमारे शरीर की कंडीशनिंग में योगदान कर सकते हैं और ताकत, शक्ति, संतुलन और लचीलेपन को विकसित करने में मदद कर सकते हैं । भारतीय शास्त्रीय नृत्य चिकित्सीय उद्देश्य के लिए आवश्यक सभी मानदंडो को पूरा करता है । नृत्य या व्यायाम के चिकित्सीय होने के लिए कुछ शर्ते है । नृत्य को निम्नलिखित आवश्यकताओं को पूरा करना चाहिए – आंदोलन या व्यायाम आनंददायक होना चाहिए । अभिव्यक्ति की इच्छा को पूरा करना चाहिए जो जीवन भर एक के साथ रहता है । इसमें खेल का तत्व शामिल होना चाहिए । मांसपेशियों को टोन करना और तंत्रिका प्रणाली । आंदोलन की समरूपता होनी चाहिए । शरीर के प्रत्येक भग को संबोधित करना चाहिए । इसे दिल को मजबूत करना चाहिए । फेफड़ों की क्षमता में सुधार करना चाहिए । तंत्रिका तंत्र को चुनौती देना चाहिए । जैविक, शारीरिक साथ ही साथ मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों के अनुसार, भारतीय शास्त्रीय नृत्य के प्रशिक्षण और अभ्यास के साथ होते हैं । शास्त्रीय नृत्य में प्रशिक्षण हृदय गति, अनुक्रमिक धारणा और उंगली अग्नेसिया (हाथ की उंगलियों को अलग करने में असमर्थता) को सकारात्मक रूप से प्रभावित कर सकता है । जैसा कि शोध में दिखाया गया है, योग, ध्यान और शास्त्रीय और लोक नृत्यों का चिकित्सीय महत्व है और यह शरीर और मन के संबंध को बढ़ाते हैं । आश्चर्य नहीं कि भारत में कई अग्रणी नृत्य और आंदोलन चिकित्सक इनमें से एक या अधिक प्रथाओं में प्रशिक्षित हैं ।

भारत में योग हजारो सालों से चला आ रहा है । योग के विषय में कई सारे ग्रंथ लिखे गए हैं और हमारे ऋषिमुनि और योगियों ने योग को बड़ी सहजता से संभाला है । कई आचार्यो ने योग के बारे में कई प्रकार से लिखा है इसका कारण यह है

कि योग एक जटिल विषय है और इसे समझना और समझाना भी जटिल है । इसी कारण योग को सरलता से समझने के लिए आचार्यो ने भिन्न–भिन्न तरीकों से योग को समझाया है। योग एक विज्ञान है और मनुष्य के कल्याण का एक मार्ग है जिसके द्वारा मनुष्य अपने शरीर, मन और आत्मा को स्वस्थ रखकर अपने कल्याण के मार्ग पर आगे बढ सकता है ।

आज के युग में मनुष्य भौतिकवादी हो गया है और उसका लक्ष्य भौतिक साधनों का संग्रह करना और उपभोग मात्र रह गया है । एसी स्थिति में आज के मनुष्य को योग की ओर ले जाना कठिन हो गया है क्योंकि मनुष्य का शरीर ही स्वस्थ नहीं है । मनुष्य का सबसे बडा धर्म अपने शरीर को स्वस्थ रखना है । जिसे सफल करने के लिए योग चिकित्सा एक महत्वपूर्ण चिकित्सा साबित होती है । योग चिकित्सा से मनुष्य स्वस्थता और आध्यात्मिकता के मार्ग पर चलता है और तन की शुद्धता के साथ–साथ मन और विचार भी शुद्ध होते हैं।

5.2 योगचिकित्सा और नृत्यचिकित्सा मानव शरीर रचना के परीपेक्ष में :

5.2.1 योग चिकित्सा

आज योग को पूरे विश्व में चिकित्सा के रूप में लिया जा रहा है, और दिन–प्रतिदिन योग चिकित्सा का प्रचलन बढ़ता जा रहा है । योग चिकित्सा को देश–विदेशो में एक रोगों के उपचार का माध्यम समझा जा रहा है । विश्व के कई सारे मनोकायिक चिकित्सा के विशेषज्ञ तथा चिकित्सक योग चिकित्सा प्रणाली में अपनी रूचि दिखा रहे हैं । उन लोगों का यह मानना है कि मनो शारीरिक तनाव को योग द्वारा दूर किया जा सकता है । दो दशकों में पाया गया है कि योगोपचार से कई सारे असाध्य रोगों में राहत मिल रही है जैसे कि अस्थि संघी और पेशियों के विकारों में ।

चिकित्सा का मतलब ग्रंथों में यह है की

"या क्रियाव्याधिहरणी सा चिकित्सा निगद्यते ।"

अर्थात् विभिन्न क्रियाएँ जिनसे रोग का निवारण होता है वह चिकित्सा कहलाती है।

ग्रंथों में कहा है की यौगिक चिकित्सा कई सारे योग के माध्यमो से कि जा सकती है, जिसमें हठयोग, मंत्रयोग, ज्ञानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग, नादयोग आदि यौगिक प्रक्रियाओं के माध्यम है ।

योग चिकित्सा किस प्रकार से मनुष्य को स्वस्थ रखती है वह तब जान सकेंगे जब मनुष्य के स्वास्थ्य के बारे में जानेगे। मनुष्य स्वस्थ है वह उसकी प्रसन्नता खुशहाली, समृद्धि और उसके कार्यो पर निर्भर है । स्वास्थ्य मनुष्य की अमूल्य भेंट है । स्वस्थ मनुष्य समाज और राष्ट्र के लिए जरूरी है ।

आयुर्वेद के अनुसार शरीर के माध्यम से ही जीवन के सभी कार्य सम्पन्न होते हैं ।

आयुर्वेद के आचार्य श्रीराम शर्माजी के अनुसार स्व में स्थित हो जाना ही स्वास्थ्य है। इसका मतलब है की अपने स्वरूप को पहचानना अपने कर्तव्यों का पालन करना तथा मानव मूल्यों को आत्मसाद करना स्वस्थ व्यक्ति के लक्षण है ।

आयुर्वेद में कहा गया है कि :

''समदोषः सामाग्निश्च् समधातुलक्रियः ।

प्रसन्नात्मेन्द्रियमन स्वस्थ इत्यामिधियते ।'' (सुश्रुत संहिता)[1]

(योग चिकित्सा के सिद्धांत, डॉ. सरस्वती काला, अध्याय–1, पेज नं. 2)

अर्थात् जिसके दोष, अग्नि एवं धातुएँ समान अवस्था में हो तथा सभी इंद्रियाँ आत्मा और मन प्रसन्न हो वह व्यक्ति स्वस्थ है । दोष, अग्नि, धातु तथा इंद्रियाँ, आत्मा तथा मन इन सभी में जब विषमता आने लगे तब व्यक्ति रोगी बन जाता है । चित्त का प्रभाव इसमें मुख्य भूमिका निभाता है । स्वास्थ क्षिण होने का मुख्य कारण चित्त विकार ग्रस्त होता है। योग के अनुसार चित्त में विकार उत्पन्न होने से शरीर में दोष उत्पन्न होते हैं । ऐसा माना गया है कि मन में जब लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष उत्पन्न होते हैं तब प्राणों के प्रसार में विषमता आने लगती है जिसके कारण प्राणों की गति में विकार होता है और उसके कारण नाड़ियों के परस्पर संबंध में दोष

उत्पन्न होता है । चिकित्सको ने भी यह माना है कि क्रोध, द्वेष, बुरे विचार, ईर्ष्या के कारण रक्त में विकार उत्पन्न होता है और तभी शरीर में रोगाणुओं और विषाणुओं की वृद्धि होती है । सारे रोगों का मूल कारण मानसिक विकार है ।

जो मनुष्य नियमित रूप से योगाभ्यास करता है वह सामान्य रोगों से दूर रहता है जैसे कि सर्दी–जुकाम, बुखार जैसे रोग । मनोकायिक व्याधि का अर्थ सन 1818 में डॉ. जे.सी.एच. हेनरोथन ने सर्वप्रथम बताया था जिसे ''सायकोसोमेटिक'' नाम दिया था । बाद में सन 1945 में डॉ. जेम्स हैलिडे ने उसको विस्तृत रूप में समझाया । ''सायको'' का मतलब है मानसिक या मन और ''सोमेटिक'' का मतलब है शारीरिक या शरीर का । सायकोसोमेटिक का अर्थ है ऐसा रोग जो मन से जुड़ा हो । कई सारी शारीरिक व्याधियों का कारण मानसिक तनाव भी माना गया है, जिसके कारण रोगी और भी अस्वस्थ हो जाता है । इसी कारण ऐसी अवस्था वाले रोगियों को त्रासदी की व्याधियां यानि स्ट्रेस डिसओर्डस कह सकते हैं । मन की कई सारी नकारात्मक अवस्थाऐं मानी गयी है जिसमें उत्तेजना, उल्हसित, नैराश्य, दुःखी यह सारी अवस्थाओं का शारीरिक स्थिति पर प्रभाव अधिक होता है । शारीरिक क्रियाओं पर तनावग्रस्त मन, अस्वस्थ मन और अशांत मन के कारण विपरीत परिणाम होता है और यह अवस्था ज्यादा दिनों तक रहें तो शरीर में पीड़ा और परेशानी शुरू हो जाती है और यहीं से मनोकायिक रोगों की शुरूआत होती है ऐसा माना जाता है। मानसिक दबाव या तनाव से मनुष्य का केन्द्रिय नाड़ी तंत्र जिसे सेंट्रल सिस्टम कहते हैं वह कार्य करने में असमर्थ हो जाता है और इसके कारण निर्णय शक्ति में कमी, याद न रहना, विचारशक्ति में कमी आ जाती है और शरीर में उत्पन्न होने वाले रासायणिक तत्वों को उत्पन्न होने वाली मात्रा में कमी हो जाती है । रक्तदाब, यकृत और वृक्क को (लीवर या किड़नी) का ठीक से काम न करना, रोग प्रतिकारक शक्ति कम होना यह सारी व्याधियां मनीकायिक व्याधि के कारण होती है।

ऐसा माना गया है कि जो व्यक्ति मानसिक तनाव में रहता है तो उसके शरीर की क्रियाएँ बिगड़ जाती है जैसे कि उसकी हृदयगति तेज होना, श्वास बढना, रक्त वहन नलिकाएँ सिकुड़ना, रक्तदाब बढ़ना, संप्रेरक के कार्य में बाधा (हॉर्मोन्स का असंतुलन), अनिद्रा, आलस यह सारी क्रियाएँ होने लगती है ।

सकारात्मक भावनाएँ रखने से मन स्वस्थ रहता है और नकारात्मक भावनाओं से मन में द्वन्द उत्पन्न होता है जिसके कारण गुस्सा आना, नैराश्य आता है जिससे मन अस्वस्थ हो जाता है । एक शास्त्रीय अनुसंधान में बताया गया है कि गुस्से के कारण अमाशय के मृदुपेशियों का पेशीतान बिगड़ता है और उसका आकार सिकुड़ता है । जिन महिलाओं के घर में झगड़े होते हैं और सम्बन्धों में तनाव होते हैं उनमें जोड़ों का दर्द (ऑर्थोयसीस) पाया जाता है । जिनके नकारात्मक और सकारात्मक विचारों से शरीर में होने वाले प्रभाव देखे जा सकते हैं।

योग के दृष्टिकोण में देखा जाए तो योगशास्त्र में यही माना गया है कि मनुष्य अपने मनोकायिक व्याधियों का खुद ही जिम्मेदार है । मनोकायिक, अति निद्रा, सुख समृद्धि वाला जीवन, व्यायाम न करना, सहनशक्ति की कमी यह सभी के कारण मनुष्य की प्राकृतिक क्षमताऐं कमझोर हो जाती है ।

महर्षि पतंजली ने अष्टांग योग के द्वारा कहा है कि अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश यह पाँच क्लेश है जो मनुष्य में कि हुई गलतियों से उत्पन्न होते हैं । इन्हीं क्लेशो के कारण मनुष्य की मानसिकता, बर्ताव और आदतें बदल जाती है । जिसके कारण मनुष्य में आक्रामकता, अहंकारीवृत्ति, चिड़चिड़ापन आ जाता है । योग प्रक्रिया को मनुष्य अपने जीवन में उतारे तो सभी क्लेश पर नियंत्रण कर सकता है और व्यक्ति में सुधार आ सकता है ।

मधुमेह के रोगों पर एक अनुसंधान किया गया है । जिससे यह स्पष्ट हुआ है कि योग चिकित्सा में किए जाने वाला शवासन जिसके उपयोग से इन्सुलिन लेने की मात्रा कम हो सकती है । ऐसा माना गया है कि योग चिकित्सा से शरीर के सभी प्रकार के कार्यो में संतुलन लाया जा सकता है । मनुष्य के शरीर में ऐसे 20 प्रकार के विरूद्ध कार्य है जिसमें संतुलन रखना आवश्यक है और वह कुछ इस प्रकार के कार्य है जैसे की शरीर का तापमान बढाना, कम करना, पानी की मात्रा, रक्त, शर्करा आदि ।

महर्षि पतंजली कृत योगदर्शन और भगवद् गीता के अध्याय 6के श्लोक 35 में कहा है कि अभ्यास और वैराग्य यह दो मार्ग से मनुष्य मन पर नियन्त्रण पा सकता है और यम, नियम आदि योगांगो का नित्य अभ्यास करके शरीर फिर से तंदुरस्त कर सकता है । मनुष्य अपने में वैराग्य की भावना रखें तो वह निराशा असमाधान और असंतुष्टि से दूर रह सकता है और बाहरी आकर्षणों से मन विचलित नहीं होगा । क्लेश कम होंगे और मन स्वस्थ रहने के कारण शरीर तंदुरस्त रहने लगेगा ।

योग चिकित्सा मनुष्य के मन और शरीर पर किस प्रकार कार्य करती है वह कई सारे विद्वानों ने अपने अनुसंधान द्वारा बताया है । जैसे की डॉ. मकरंद मधुकर मोरे ने अपनी पुस्तक शरीर विज्ञान और योगाभ्यास में योग चिकित्सा किस प्रकार कार्य करती है वह बताते हुए कहा है कि मानव शरीर की नाड़ियों के शुद्धिकरण से तथा आसन और प्राणायाम से मनोकायिक स्वस्थता बढती है और शरीर और मन की भी स्वस्थता और क्षमता बढती है तथा तेज और ओज बढते हैं । ओंकार जप और ध्यान करने से मन की धारणा बढकर, वृत्तियों पर नियंत्रण होता है और वर्तन में सुधार आता है । मन सकारात्मक होने के कारण उसमें संतुलन, प्रसन्नता आती है और तनाव दूर होता है । इस प्रकार योग चिकित्सा द्वारा रोग प्रक्रिया को रोका जा सकता है और रोग प्रतिकारक शक्ति को बढाया जा सकता है ।

मनोकायिक रोग के संबंध में भगवद्गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है कि –

''सुख–दुःख से समेकृत्वा लाभलभौ जयाजयौ ।।''[1]

(भगवद् गीता, अध्याय 2, श्लोक 36)

अर्थात् यदि हम सुख–दुःख, लाभ–नुकशान, जय–पराजय को समान दृष्टि से देखें तो हमें कभी त्रास नहीं होगा । मन स्थिर रहेगा और आत्मविश्वास बढेगा । इसके कारण सात्विक वृत्ति, उदारता, क्षमाभावना, सच्चाई इन गुणों से युक्त मनुष्य मानसिक स्वस्थता को पा सकता है ।

1) **शरीर विज्ञान और योगाभ्यास डॉ. मकरंद मधुकर गोरे, मनोकायिक रोगों की योग चिकित्सा । पेज नं. 281**

योग चिकित्सा के बारे में **डॉ. सरस्वती काला ने अपनी पुस्तक योग चिकित्सा के सिद्धांत में अध्याय–1** जो योग चिकित्सा नाम से है उसमें कहा है कि योग साधना और योगाभ्यास निरन्तर करने से शरीर हंमेशा स्वस्थ और निरोगी रहता है और मनुष्य सभी दोषों से मुक्त होकर मोक्ष प्राप्त कर सकता है ।

आयुर्वेद शास्त्र के मुख्य ग्रंथ चरक संहिता के इस श्लोक में भी योग के बारे में कहा गया है । जिसमें –

''योग मोक्षेच सर्वासा वेदनानाभवर्तनम् ।

मोक्षों निवसन्तिः शेषा योगो मोक्ष प्रवर्तक ।।''

योग चिकित्सा के सिद्धांत, डॉ. सरस्वती काला, अध्याय–1, पेज नं. 2

योग चिकित्सा द्वारा शरीर और मन को स्वस्थ किया जा सकता है । उसी संदर्भ में शरीर और मन का स्वास्थ्य जानना भी जरूरी है । स्वास्थ्य और उसके प्रकार के बारे में जाना है कि स्वास्थ्य का अर्थ ''स्वास्थ्य'' शब्द में ही है यानि ''स्व'' में स्थित जो स्व में स्थित हो जिसका अर्थ है अपने स्वरूप का ज्ञान होना जिसे पूर्ण ज्ञान कहा जाता है । इसका अनुभव किया जा सकता है और ऐसा कहा गया है कि जो मनुष्य शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक दुःखों से मुक्त है वही मनुष्य स्वस्थ कहा जाता है और यही स्वास्थ्य है ।

चिकित्सा सिर्फ अवरोध को ही दूर करता है और स्वास्थ्य खुद बनता है । स्वास्थ्य हमारी नियति है और बिमारिया हम बाहरी दुनिया से नहीं लाते । बिमारी की एक परिभाषा होती है और अनुभूति स्वास्थ्य की होती है । स्वास्थ्य कोई भी चिकित्सा के द्वारा नहिं मिलता वह सिर्फ अवरोध दूर करता है ।

आयुर्वेद के अनुसार ऐसा माना गया है कि स्वस्थ व्यक्ति उसे कहते हैं । जिसके शरीर में वात, पित्त और कफ जिसे त्रिदोष कहा जाता है । उसकी अवस्था साम्य

हों और पंच महाभूतों की पांच तथा सातों धातुओं की सात और तेरहवीं जठराग्नि साम्य अवस्था में हो यानी सभी के कार्य अच्छे तरीके से हो रहे हों तथा मलमूत्र के विसर्जन की क्रिया सही हो और मन प्रसन्न हो ऐसे व्यक्ति को स्वस्थ कहा जा सकता है ।

योग के अनुसार स्वास्थ्य की व्याख्या की जाए तो ऐसा माना गया है कि जिसका चित्त जिसमें मन, बुद्धि और अहंकार समाविष्ट है उस पर नियंत्रण हो वह व्यक्ति स्वस्थ कहा जा सकता है ।

योग में ऐसा कहा गया है कि मन या चित्त का अस्थिर होना या चंचल होना ही रोगों का मूल कारण है । योग के मुनि पतंजलि ने योग दर्शन में समाधिपाद के श्लोक 30 में यह समजाया है । यह सारी व्याधियां जो मानसिक और शारीरिक है वह योगाभ्यास द्वारा दूर की जा सकती है और निरन्तर अभ्यास के कारण शारीरिक और मानसिक चिकित्सा होते अन्त में सभी प्रकार की व्याधिओं से मुक्ति मिल सकती है ।

ऐसा माना गया है कि योग चिकित्सा के मुख्य साधनों में कई प्रकार की यौगिक सूक्ष्म क्रियाएँ, व्यायाम, आसन, प्राणायाम, शटकर्म, मुद्राएँ, बन्ध और ध्यान आदि के द्वारा की जाती है । शट्कर्म यानि धौति, वस्ति, नेति, नौली, त्राटक और कपालभाती है । शरीर का शोधन तथा शरीर में एकत्र मल पदार्थो का निःसरण गजकरणी और शंख प्रक्षालन क्रियाओं से किया जाता है ।

योग में किऐ जाने वाले शट्कर्म आयुर्वेद को पंचकर्म के नाम से जाना जाता है । जिसके द्वारा नाड़ी शोधन कर्म किया जाता है । पेट के सभी रोग जैसे कि गैस, अपच, अम्लपित्त, अजीर्ण आदि गजकरणी क्रिया जिसे कुंजल भी कहा जाता है । यह क्रिया करने से पेट के रोग दूर होते हैं । सिरदर्द में नेति कर्म लाभ दायी है । श्वास और दमे के कुष्ठ रोग में धौति कर्म लाभदायक है । इस प्रकार शट्कर्म से भी योग–चिकित्सा की जा सकती है ।

ऐसा माना गया है कि योग चिकित्सा में महत्वपूर्ण अंग प्राण तत्व है और उसका विकास और नियंत्रण हमारे स्वास्थ्य के लिए बहुत ही लाभदायी है । सम्पूर्ण विश्व में प्राणतत्व विद्यमानन है । ऐसा हमारे शास्त्रों में लिखा गया है कि प्राण जीवयती इति प्राणः यानि जो जीवात्मा के जीवन का आधार है वह प्राणतत्व है । प्राणशक्ति द्वारा हमारे शरीर में कई सारी क्रियाएँ होती है । जैसे कि आहार पाचन, रक्त बनाना, पोषण आदि । प्राण शक्ति तभी क्षीण होती है जब मनुष्य अप्राकृतिक तरीके से शरीर को चलाता है । प्राणशक्ति को विकसित योग के माध्यम से ही किया जा सकता है । जिसमें आसन के अभ्यास का बहुत महत्व है । आसनों के अभ्यास से रक्त संचार में वृद्धि आती है और रोग दूर होते हैं । ध्यान की क्रिया से मानसिक दोषों को दूर किया जा सकता है । जिससे एकाग्रचित्त होने से प्राण शक्ति विकसित होती है ।

योग चिकित्सा में औषधियाँ नहीं दी जाती । इसी कारण उसके कोई कुप्रभाव नहीं है । ऐसा माना गया है कि आज का व्यक्ति ऐलोपेथी दवाईयों का सेवन करता है जिसका दुष्परिणाम आते हैं और वह अनेक बड़े रोगो का शिकार बन जाता है । इसका कारण यह है कि ऐलोपेथी दवाईयाँ दुमनात्मक हे वह रोगो का नाश नहिं करती मगर वह रोगों को दबाती है । योगचिकित्सा में शोधन क्रिया की जाती है जिसमें शरीर का शुद्धिकरण होता है । इसमें रोगो के कारणों को दूर किया जाता है । आधुनिक चिकित्सा एक दमनकारी चिकित्सा है जो शारीरिक विकास को दबाती है जबकि योग चिकित्सा रोग के लक्षणों के साथ–साथ रोग का भी मूल से नाश करती है ।

शरीर और मन एक दूसरे से जुड़े है । मन का प्रभाव शरीर पर ज्यादा होता है । मनुष्य अपने आचार–विचार, अपनी मनमानी और अहंकार के कारण दुःखी ही जाता है । इसी कारण ऋषिमुनियों ने विविध योग प्रक्रियाओं की संरचना की । व्यक्तित्व के विकास में आधुनिक विज्ञान ने भी मन की भूमिका महत्वपूर्ण माना है । शरीर, मन और चित्त यह तीन अकेले कुछ नहीं कर सकते इनका कार्य एक–दूसरे से जुड़ा है । योगशास्त्र में इसका उल्लेख दिया गया है । इसी प्रकार विज्ञान भी इससे सम्मत है कि मन में उत्पन्न होने वाले भावनाओं की तरंगो का तथा विचारों

का मनुष्य के शरीर पर गहरा असर होता है और शारीरिक अवस्था, खन–पान, आदतें, रहन–सहन की मन पर असर होती है । मन, भावनाएँ और संप्रेरक (हार्मोन्स) का एक–दूसरे के साथ गहरा संबंध है । इसी कारण विज्ञान ''सायकोन्यूरो एंडोफ्रानोलॉजी'' जैसे विषय का निर्माण करके मानवीय शरीर के अंतरंग को जानने की कोशिश कर रहा है । संक्षिप्त में कहें तो प्रथम शरीर का मेल यानि अशुद्धियों को दूर करने के बाद नाड़ी शुद्धि और बाद में चित्त की वृत्तियों की नियंत्रित किया जाता है । इसके बाद ही धारणा और ध्यान सिद्ध होगा । नित्य योगाभ्यास के कारण व्यक्ति का सर्वांगीण विकास होता है । मानसिक सुख, शांति, प्रसन्नता और तंदुरस्त स्वास्थ्य प्राप्त होता है । इसी कारण योगाभ्यास से मनुष्य की शारीरिक तथा मानसिक क्षमताओं की वृद्धि होती है और भाग्योदय होता है ।

योग से पूर्ण जीवनशैली से मनुष्य के जीवन में जरूरी है । दिनचर्या में योग को अवश्य स्थान देना चाहिए । हररोज योगाभ्यास करने वाला व्यक्ति मानसिक शांति, प्रसन्नता प्राप्त करता है । उसकी चित्तवृत्तियों पर उसका नियंत्रण आ जाता है । इसके कारण उस व्यक्ति के वर्तन सामाजिक और नैतिक दृष्टि से आदर्श जीवन हो जाता है । इसी कारण सभी मनुष्य को योगाभ्यास करना चाहिए ।

योगशास्त्र ''चिकित्सा'' या रोगोपचार नहीं है । योग कोई चिकित्साशास्त्र नहीं है लेकिन कई सारी ऐसी बीमारियाँ है जो बाह्य वातावरण से आने वाले जीवाणु–किटाणुओं से या जंतुओ से नहीं होती मगर मानसिक अशांति, तनाव के कारण होती है । जिसके कारण अस्थमा, मधुमेह, हृदयविकार, उच्चरक्तदाब, अम्लता, निदानाश, निराशा आदि प्रकार की बिमारी होती है । इन सभी बिमारीओं को मनोकाय (सायकीसोमटिक) रोग कहा जाता है । इन सभी रोगों का निवारण योग प्रक्रिया द्वारा होते हुए देखा गया है । योगाभ्यास से रोगप्रतिकारक शक्ति भी बढती है । योगाभ्यास से शरीर निरोगी, तंदुरस्त रहता है । हर चिकित्साशास्त्र का अपना–अपना स्थान और मर्यादा होती है । योग को यह अपने पूरक चिकित्सा के रूप में ले सकते हैं । जैसे–आयुर्वेद और योग, होमियोपेथी और योग आदि ।

आज की परिस्थिति में योग के द्वारा मनुष्य अपना जीवन तनावरहित, रोगमुक्त, सुखी और स्वास्थ्यपूर्ण जीवन जीता है । पिछले दो–तीन दशकों में योग का बहुत प्रचार–प्रसार हुआ है । देश–विदेश में भी योग शिक्षक, योग प्रशिक्षक की आवश्यकता होने लगी और योग संस्थएँ और योग महाविद्यालयों की स्थापना हुई है । पाठशाला और महाविद्यालयों में शारीरिक प्रशिक्षण के साथ–साथ योग का भी प्रशिक्षण दिया जाने लगा है । योग शिक्षक तैयार करने के लिए पदविका अभ्यासक्रम की शुरूआत हुई है । इस अभ्यासक्रम में तंत्रशुद्ध तथा वैज्ञानिक ढंग से योग की शिक्षा दी जाने लगी है ।

5.2.2 योग प्रक्रियाओं द्धारा योगचिकित्सा का मानव शरीर और मन पर असर :

योग प्रक्रियाओं का मानव शरीर और मन पर कैसा असर होता है और उसका परिणाम क्या होगा यह जानने से पहले मनुष्य के शरीर की स्वाभाविक कार्यपद्धति और उसकी रचना जानना और समझना जरूरी है । इसी समझ को रखते हुए कैवल्यधाम संस्थाए ने ''योग पदविका'' अभ्यासक्रम में ''योग प्रक्रिया'' और शरीर रचनाशास्त्र तथा शरीर क्रिया विज्ञान नाम का विषय शुरू करके योग प्रक्रियाओं को विज्ञान के आधार पर समझ सकें और सही तरीके से उपयोग कर सकें ।

5.2.2.1 योग चिकित्सा की दृष्टि से पाचन क्रिया का संबंध : आमाशय में संपूर्ण पाचन क्रिया का संबंध है तो हमारा ध्यान मूख, दाब, वेदना, तापमान, जलन जैसी संवेदनाओं पर नहीं जाता । लेकिन पाचन क्रिया में किसी कारण बाधा आ जाए तो हमारा ध्यान पाचन क्रियाओं में होने वाली संवेदनाओं पर जाता है और उसकी वजह से ध्यान उस तरफ जाता है । योगासन करते समय कई आसनों में हमारे पाचन अंगों पर दबाव और तनाव होता है इसके कारण हमारा ध्यान अंदर की तरफ हो जाता है और योगासन के अभ्यास में यह जरूरी भी है। योगाभ्यास सुबह खाली पेट या शाम को करना उचित माना जाता है । इसका कारण यह है कि द्रव्ययुक्त या पतले पदार्थ या जलयुक्त पदार्थ को पेट में जाने के बाद 1 घंटे में छोटी आंत में प्रवेश करता है और वही शोषण

होता है और ठोस पदार्थ का पाचन आमाशय में लगभग दो घंटे से ज्यादा होता है और बाद में बड़ी आंत में प्रवेश करता है । इसी कारण मल विसर्जन के बाद ही योगाभ्यास करना चाहिए । योग होने वाली क्रिया में (षट्कर्म) धौति की जाती है । उस क्रिया का संबंध अन्न नलिका और आमाशय से जुड़ा है । धौति की क्रिया में उसे धौति की निगला जाता है । धौति 20 मिनिट तक आमाशय में रहती है उसके बाद छोटी आंत में जाने की संभावना बढ़ जाती है । इसी कारण धौति को 15 मिनिट से ज्यादा आमाशय में नहीं रखना चाहिए । धौति को आमाशय में 10 मिनिट के बाद बाहर निकाल देना चाहिए । गुदा, मलाशय और बड़ी आंत को प्रभावित करने के लिए बस्ति क्रिया होती है । गुदा के बाह्य स्नायु वलय का संकोचन और प्रसार या शिथीलीकरण अश्विनी मुद्रा में किया जाता है । कई सारे आसनों का प्रभाव और उड्डियन और नौलि जैसे षट्कर्मो का प्रभाव आमाशय बड़ी आंत और मूत्राशय पर होता है और उसकी असर उनसे जुड़े नाड़ी केन्द्रों पर होती है । शरीर के मध्य में स्थित नाड़ी तंत्र और पाचन तंत्र का कोई संबंध नहीं है पर नाड़ी तंत्र के केन्द्र में हायापोथंलेमस होता है और उस जगह भावनात्मक व्यवहार, मानसिक अवस्था का नियंत्रण होता है और जो तनावग्रस्त अवस्था या मानसिक स्थिति ज्यादा समय तक रहती है तो अम्लता यानि एसिडिटी, जलन, अपच और अल्सर भी हो सकता है । इसी कारण योगाभ्यास द्वारा भावनाओं पर नियंत्रण रखकर खुद को शांत रखा जा सकता है ।

5.2.2.2 योग चिकित्सा की दृष्टि से रक्त परिभ्रमण तंत्र का संबंध :

योग के कई आसनों में रक्तभार नियंत्रण या कार्य किया जाता है । कई आसन के द्वारा रक्त संवहन प्रणाली पर कम से कम कार्यभार रहता है जैसे–पद्मासन, वज्रासन आदि कई आसन है जिसमें रक्तभार की शिकायत है उन्हें यह आसन नहीं

करने चाहिए । जैसे की सर्वांगसन, विपरीतकरणी, शीर्षासन, हलासन, मयूरासन और प्राणायाम जैसे की भस्त्रीका, उड्डियान, जालंधर बंध इनका विशेष संबंध रक्त संवहन से होने के कारण रक्तभार की शिकायत वाले व्यक्ति को नहीं करना चाहिए । आसन करते समय हृदय की गति नियंत्रित होनी चाहिए । अगर वह बढ जाए तो ठीक नहीं है । योगाभ्यास से शरीर और मन शिथिल होता है और मानसिक शांति मिलती है । इससे स्नाययिक तान कम होता है और रक्त वाहिनियां शिथिल हो जाती है जिसके कारण रक्तभार तथा हृदयगति भी कम हो सकती है । मानसिक शांति और प्रसन्नता योगाभ्यास द्वारा संभव हो सकता है ।

5.2.2.3 योग चिकित्सा की दृष्टि से श्वास प्रणाली :

योग की दृष्टि से श्वास प्रणाली का योगदान प्राणवायु प्रदान करने के उपरांत नाड़ीतंत्र को जागृत, सजाग, ध्यान या लक्ष्य से संबंधित भी है । प्राणायाम में इच्छा से किए जाने वाली श्वसन क्रिया और मन का संबंध जुड़ा है । श्वसन तंत्र प्राण और मन दोनों से जुड़ा है । श्वसन क्रिया हमारे आध्यात्मिक मार्ग की सीढ़ी मानी जाती है ।

5.2.2.4 **योग चिकित्सा की दृष्टि से जागृतावस्था और निद्रा :** बह्य वातावरण से आने वाली संवेदनाओं के कारण हमारा ध्यान आकर्षित होता है और मन बाहर की ओर रहता है । हमें अन्दर की ओर ध्यान देने के लिए आंखें बंद करनी पड़ती है जिसके कारण 50 से 60 प्रतिशत संवेदनाएँ कम हो जाती है और हम अन्दर की ओर ध्यान दे सकते हैं । इस क्रिया के कारण हमारे विचारों की संख्या में कमी आती है । इसी कारण योग का अभ्यास करते समय आंखें को बंद करना आवश्यक और उत्तम है । श्वास प्रश्वास द्वारा हमम न की अंदर की तरफ ला सकते हैं । इसी कारण हठयोग में प्राणधारणा को संकल्प दिया गया है । बहिरंग योग जैसे की आसन, प्राणायाम आदि का मुख्य उद्देश्य

नाड़ी तंत्र को मजबूत और विकसित करना है जिससे आध्यात्मिक शक्ति जिसे योग में कुंडलिनी शक्ति कहा गया है वह जागृत होती है और वह होने से उसे तोलकर, सहन कर सकें । नाड़ी तंत्र व्यवस्थित प्रशिक्षित और विकसित होने से मानसिक स्थिरता और एकाग्रता बढ़ती है । जिससे ध्यान जैसे अंतरंग योग में बाधा ना आए । आसन और प्राणायाम जैसी योग की क्रियाओं का प्रभाव शरीर में नाभि और उसके आसपास के प्रदेश और कटिप्रदेश तथा सुषुम्ना के आखरी हिस्से पर होता है । उस जगह रक्तसंचार की मात्रा बढ़ती है जिसके कारण नाड़ी तंत्र की शाखाएँ और संज्ञाग्राहक सशक्त होते हैं और उत्तेजित होते हैं । संज्ञाग्राहक से आने वाले संवेगों के कारण नाड़ी केन्द्रो को नयी प्रेरण मिलती है और वह इनको समझने लगते हैं । परानुकंपी स्वायत्त नाड़ी तंत्र इसी प्रदेश में होता है जिसके कारण नयी उत्तेजनाएँ प्राप्त होती है । उनसे उसका 'मल' दूर होता है और इसीको नाड़ी शुद्धि कहा गया है ।

5.2.2.5 योग चिकित्सा की दृष्टि से अंतःस्त्रावी ग्रन्थि तंत्र :

अंतःस्त्रावी ग्रन्थियों के संप्रेरक का गहरा सम्बन्ध हमारी विभिन्न भावनाएँ, मानसिक स्थिति, स्वभाव से है जिसके कारण हमारे मनोशारीरिक स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ता है । शास्त्रो में कहा गया है कि आसन, बंध, मुद्रा आदि यौगिक प्रक्रियाओं का अंत ःस्त्रावी ग्रंथियों पर प्रभाव होता है । व्यायाम और खेलकूद करने से भी इन पर असर होता है लेकिन अधिकतर शारीरिक बल, कौशल्य या कोई एक अंग का विशेष विकास करने हेतु यह किया जाता है । योगाभ्यास का उद्‌देश्य ग्रन्थि तथा शरीर के अन्य सभी कार्यो में समत्व का निर्माण करना है । इसी कारण योग के अभ्यास को व्यायाम की तरह नहीं करना चाहिए । ध्यान और यौगिक शिथिलीकरण से नाड़ी संस्थान अपने आप ही विशेष रूप से संतुलित होता है । इसके फलस्वरूप

भावनाएँ तथा मानसिक अवस्था में समतोलन आता है । योगाभ्यास को नियमित रूप से करने से तान, तनाव, स्वायत्त नाड़ी संस्थान का संतुलन नहीं बिगडता क्योंकि इसके कारण शरीर के भीतरी वातावरण में विशिष्ट प्रकार का संतुलन या साम्यावस्था स्थापित होती है । इसके कारण साधक को शांति, प्रसन्नता, आनंद और समाधान का अनुभव होता है । इसलिए मधुमेह, दमा जैसी बिमारीयों वाले रोगियों को राहत होती है ।

5.3 योगासन और नृत्यासन करने से होने वाली विशिष्ट चिकित्सा और लाभ :

पद्मासन/ ब्रह्मस्थानक : यह नियमित किया जाए तो कमर दर्द या घुटनों के दर्द में राहत होती है ।

भुजंगासन : इस तरह यह हमारे पेट के अवयव, जिगर, गुर्दे और अधिवृक्क ग्रन्थि के लिए लाभकारी होता ही है, किन्तु यह हृदय की मांसपेशिओं को भी बल देता है । यह आसन मेरूदंड के लिए सबसे बेहतर है, यदि मेरूदंड की चक्राकार हड्डीया थोड़ी सी विस्थापित होती है तो उन्हें पुनः अपने योग्य स्थान पर लाने के लिए यह आसन उपयुक्त है ।

वज्रासन : यह आसन करने से पाचनक्रिया में मदद होती है, तथा घुटनों के दर्द में राहत होती है । शरिर के निचले हिस्सों में जैसे की निचला पेट, कटि प्रदेश तथा जननेन्द्रिय प्रदेश में लाभकारी होता है।

गरूड़ासन : यह आसन करने से शरीर में समतुलन की क्षमता बढ़ती है, हाथ–पैर मजबूत बनते हैं और इस आसन के अभ्यास से बच्चो की ऊँचाई बढ़ सकती है ।

ताड़ासन : ताड़ासन से शरीर की दशा में सुधारणा लाई जा सकती है, जिससे शरीर की सिधाई को बेहतर बनाया जा सकता है । इससे मेरूदंड, पैर, हाथ और पांव पर उम्र के साथ होने वाला अपक्ष प्रभाव का भी मुकाबला किया जा सकता है । धनुषाकार हाथ और पैरों वाले लोग कई दफा दिखते है। यदि उन्होंने ताड़ासन की साधना की होती तो इन विकृतियों को टाला जा सकता है ।

कटी चक्रासन :यह आसन करने से पेट के स्नायुओं और अवयवों की कार्यक्षमता बढ़ सकती है और शरीर स्वस्थ बन सकता है । कब्ज और अपचयन दूर होता है । मेरूदंड को लचीला और स्वस्थ बना सकता है । हाथ और पैरो को मजबूत बना सकता है ।

तिर्यक ताड़ासन : इसमें मणिपुर या नाभि के चक्र पर ध्यान केंद्रित किया जाता है, जिससे अधिवृक्क ग्रंथिओं को सक्रिय किया जाता है । यह पुरानी कब्ज को ठीक करता है क्योंकि यह बृहदान्त्र और बड़ी आंतों के दोनों किनारों पर दबाव डालता है ।

त्रिकोणासन : इस आसन में कूल्हों, पीठ की मांसपेशियों, छाती, कंधों और रीढ़ की हड्डी में खिंचना होता है । रीढ़ की हड्डी की नसों को उत्तेजित करते हुए आंदोलन जांघो, पिंडलियों को ताकत देता है और रीढ़ के लचीलेपन में भी सुधार करता है और कंधों के संरेखण को सही करता है । यहां एकाग्रता का बिंदु मणिपुर चक्र, अग्नि या व्यक्तिगत शक्ति का आसन है । यह आसन संचार प्रणाली को मजबूत करता है, गहरी सांस लेने में सुधार करता है और तनाव को कम करता है । यह गैस्ट्राइटिस, अपच और एसिडिटी से भी छुटकारा दिलाता है ।

चक्रासन : यह आसन हृदय की धमनियों को मोटा होने से रोकता है और पूरे शरीर में स्वस्थ रक्त परिसंचरण सुनिश्चित करता है । यह पिट्यूटरी, पीनियल और थायरॉयड ग्रंथियों को उत्तेजित करता है। आसन अधिवृक्क ग्रंथियों को उत्तेजित करता है और साथ ही आपकी इच्छा शक्ति को मजबूत करता है और तनाव सहन करने की आपकी क्षमता को बढ़ाता है ।

शलभ शीर्षासन : इस मुद्रा में उलटा होने से मस्तिष्क की कोषिकाओं को रक्त की कायाकल्प आपूर्ति को ट्रिगर करता है । पिट्यूटरी ग्रंथि के अनुरूप आज्ञा चक्र सक्रिय होता है, जिससे एकाग्रता, विचार की स्पष्टता, स्मृति और आध्यात्मिकता में वृद्धि होती है । इस चक्र को अंर्तज्ञान टेलीपैथी और रहस्यवाद का आसन कहा जाता है । अंतिम मुद्रा में उलटा होने से मस्तिष्क की कोषिकाओं को रक्त की कायाकल्प आपूर्ति होती है । यहाँ सहस्त्रार चक्र पर ध्यान केंद्रित किया गया है ।

अश्वसंचलासन : यह आसन पेट के अंगों को टोन करने में मदद करता है, साथ ही स्ट्रेचिंग के दौरान पैर की मांसपेशियों को लचीलापन प्रदान करने में मदद करता है ।

शलभासन : यह आसन करने से रोग प्रतिकारक शक्ति बढ़ती है और कमर व नितंब प्रदेश पर खिंचवा आता है और पेट उसके कारण रक्तभिसरण होता है तथा पेशियाँ सशक्त और मजबूत हो सकती है । यह आसन करने से पीठ का दर्द कम होता है और कफ विकार नहीं होता ।

5.4 चिकित्सा के रूप में किये जाने वाली क्रमशः नृत्य की हस्त मुद्रा और योग की हस्त मुद्रा को करने से होने वाले विशिष्ट लाभ :

सिंहमुख/अपान मुद्रा : यह मुद्रा लकड़ी के तत्व को उत्तेजित करती है जो यकृत और पित्ताशय की ऊर्जा से जुड़ा होता है । यह वायु तत्त्व को कम करके हृदय के रोगों को दूर करता है ।

मयूर हस्त /पृथ्वी मुद्रा : इसका नाम पृथ्वी के नाम पर पड़ा है । यह मुद्रा पृथ्वी तत्व को बढ़ाते हुए भीतर की अग्नि ऊर्जा के घटने का प्रतिक है । इस प्रकार यह उन ऊत्तकों को मजबूत करने में मदद करता है जिनमें पृथ्वी तत्व शामिल होते हैं ।

त्रिषूल हस्त/ वरुण मुद्रा : शरीर में आधे से अधिक द्रव होता है, इस मुद्रा का उपयोग शरीर में द्रव संतुलन बनाए रखने के लिए किया जाता है ।

शुकटुंड हस्त /रूद्र मुद्रा : रूद्र को सौर जाल चक्र का शासक माना जाता है । पंचभूत, सिद्धांत में पृथ्वी को केन्द्रक शक्ति माना गया है । इस प्रकार रूद्र मुद्रा पृथ्वी के तत्वों को भीतर मजबूत करने का प्रतिक है ।

सुचि हस्त/सुचि मुद्रा : इस मुद्रा के अभ्यास से आंतों की सफाई में मदद होती है ।

कांगुला हस्त/महासिर मुद्रा : योग में इस मुद्रा का उपयोग तनाव को कम करने और श्लेष्मा जमाव को खत्म करने के लिए किया जाता है ।

भ्रमर हस्त/भ्रमर मुद्रा : इसका उपयोग एलर्जी के इलाज के लिए किया जाता है।

मुकुल हस्त/मुकुल मुद्रा : इसे शक्तिदायक और आरामदायक मुद्रा माना जाता है।

संपुट हस्त/गणेश मुद्रा : कुंडलिनी योग में तीसरा चक्र अग्नि के तत्व द्वारा शासित होता है जो हमारे भीतर अवांछित को जलाने और शुद्ध करने का अवसर प्रदान करता है । इस प्रकार यह विकास के नए अवसर प्रदान करता है ।

कर्कट हस्त/उषा मुद्रा : यह हमें यह भी बताता है कि किसी की जिज्ञासा और दुनिया की खोज को बढ़ावा देने से नए क्षितिज की खोज होती है ।

शंख हस्त/शंख मुद्रा : यह मुद्रा ओम की लौकिक ध्वनि के साथ बुरी और नकारात्मक शक्तियों को दूर भगाने का प्रतिक है ।

गरूड़ हस्त/गरूड़ मुद्रा : यह मुद्रा रक्त परिसंचरण को सक्रिय करती है, अंगों को मजबूत करती है और शरीर के दोनों और ऊर्जा को संतुलित करती है ।

शिवलिंग हस्त/शिवलिंग मुद्रा : यह मुद्रा शारीरिक और मानसिक थकान को दूर करने में मदद करती है और शरीर को ऊर्जा प्रदान करती है ।

5.5 योग और नृत्य में प्राणायाम तकनीक द्वारा चिकित्सा :

योग और नृत्य की सभी गतिविधियों में श्वास नियंत्रण शामिल होता है । प्राणायाम के प्रयोग से आंदोलन को तरलता प्रदान होती है । थकान पर नियंत्रण आता है, श्वास को अधिक कुशल बनाने में मदद करती है, और इस प्रकार श्वसन की मांसपेशियां मजबूत बनती है ।

प्राणायाम में श्वास नियंत्रण में बंध ऊर्जा प्रतिधारण के तरीकों के लिए एक शब्द है । विशिष्ट बंध मूल बंध, जालंधर और उड़िया बंध है । एक नर्तकी इन बंधों को हर समय, होशपूर्वक या अवचेतन रूप से, विभिन्न नृत्य आंदोलनों में श्वास तकनीक के साथ लागू करती है । सबसे अच्छी बात यह है कि ये बंध सांस लेने के समान है, वे अनैच्छिक है और हर समय होते हैं ।

मूल बंध : इस बन्ध के अभ्यास से की मजबूती बनी रहती है।

उड़िया बंध : यह बंध पेट की मांसपेशियों, पाचन तंत्र और हमारी आंतों को मजबूत करता है ।

जालंधर बंध : इस बंध का अभ्यास ठुड्डी को छाती की मजबूती बनी रहती है।

5.6 ध्यान के बारे में बताते हुए चक्रो का वर्णन तथा चक्रो से योग और नृत्य में होने वाले विशिष्ट लाभ तथा उसके द्वारा चिकित्सा :

आसन और मुद्रा के प्रथम खंड विभाग–3 के 69 खंजनासन के अंतर्गत श्री योगीराज गोरखनाथ । योग का सांतवां अंग ध्यान है और उसके लक्षण बताते हैं ।

महर्षि पंतजली ने कहा है ।

द्विविध भवति ध्यानं सफलं निष्फलं तथा ।
स–कलं चर्या भेदेन निष्फलं निर्गुणं भवेत् ।। यो.सू.वि.पा.सूत्र –2

अर्थात् – सगुण और निर्गुण एसे भेद से ध्यान के दो प्रकार है । शक्ति, शिव, राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर आदि के स्वरूपों का ध्यान सगुण ध्यान कहलाता है और निर्मल ज्योति स्वरूप के ध्यान को निर्गुण ध्यान कहा गया है ।

ध्यान के नौ स्थान है गुदा , लिंग, नाभि, हृदय , कंठ, जिभ , पडजिभ , भ्रुमध्य, सहस्त्रदुलपध्म। व्यवच्छेदन– विद्या द्वारा चक्रो का बोध होना आवश्यक है । श्री योगराज गोरक्षनाथ ने बड़ी ही सुंदरता से इसका वर्णन देते हुए बताया है कि सुषुम्णा नाडी में ग्रन्थि या आयी हुई है उसे चक्र या पध्म की संज्ञा दी गयी है । व्यवच्छेदन विद्या से चक्रो का बोध होना शक्य नहीं है । व्यवच्छेदन मृत शरीर के पोष्टमोर्टम से प्राप्त हो सकता है । योग विज्ञान की अपनी स्वतंत्र पद्धति है जिसमें व्यवच्छेदनविद्या मृत शरीर के पोस्ट मोर्टम से प्राप्त की जा सकती है । उसी तरह योग विद्या समाधि सिद्धी से प्राप्त की जाती है । व्यवच्छेद विद्या में शव माध्यम है और योगविद्या में स्वशरीर और स्वचित्त । शव में प्राण नहीं होते और जीवीत शरीर में प्राण होता है । प्राण बिना का शरीर चक्रो की गति का अनुभव नहीं कर सकता।

ब्रह्मांड को शुद्ध चेतना की अभिव्यक्ति माना जाता है, योग तंत्र शिव को स्थिर, निराकार गुण और शक्ति को गतिशील रचनात्मक पहलू के रूप में देखता है। नृत्य एवं योग दोनों ही कुंडलिनी को जागृत करने में सहभागी होते हैं, जो मेरूदंड के ताल में प्रसुप्त चेतना शक्ति होती है । यह ऊर्जा जब जागृत की जाती है, तब समाधि की अंतिम स्थिति तक ले जाती है । इस स्थिति में व्यक्ति सम्पूर्ण अति–चेतना प्राप्त करता है और आत्म की वास्तविक प्रकृति में लीन होता है । इस स्थिति में नृत्यकार और नृत्य एक हो जाते हैं और नृत्यकार नृत्य बन जाता है । परंपरिक भारतीय लोकाचार ने एक स्वस्थ व्यक्ति के विकास के लिए सभी लोगों के भीतर मौजूद विरोधी तनावों को संतुलित करने की आवश्यकता को मान्यता दी, जो स्वयं साथ–साथ बाहरी दुनिया के साथ सामंजस्य स्थापित करता है । तभी कोई इंसान अपने विचारों को, शब्दों को और कार्यो को अपने वश में रख सकता है । एक संतुलित, समंजस व्यक्तित्व के निर्माण पर जोर दिया गया था । हमारे सभी देवी–देवताओं में फिर वह चाहे शंकर, कृष्ण, माता सरस्वती या गणेश हो । अन्य पावन गुणों के अतिरिक्त कलात्मक गुण भी पाए जाते हैं । हिन्दु पौराणिक कथाओं

में षिव योगीराज भी है, एक ऐसे सम्पूर्ण योगी जिन्होंने 840,000 आसनों का निर्माण किया । जिनमें आज किए जाने वाली हठ योग मुद्राएँ भी शामिल है । आलंकारिक स्तर पर, हठ सूर्य और चंद्रमा का मिलन है और क्रमशः मर्दाना और स्त्री ऊर्जा को दर्षाता है । कठोपनिषद का एक श्लोक कहता है – जिसने मन की एकाग्रता से सर्वोच्च ज्ञान प्राप्त किया है वह अपनी इंद्रियों पर अवश्य नियंत्रण रख सकता है, जैसे कि एक सारथी द्वारा उत्साही घोड़ों को नियंत्रित किया जाता है ।

चक्र सात है । ऊपरी पाँच चक्र आध्यात्मिक जरूरतों से जुड़ें हैं और पाँच तत्वों का प्रतिनिधित्व करते हैं, जिनमें व्योम, हवा, अग्नि, पानी और धरती का समावेष होता है । नीचे के तीन चक्र शरीर की शारीरिक जरूरतों को पूरा करती है । सहास्त्रार चक्र सिर के सर्वोच्च हिस्से में स्थित है और अंतर्ज्ञान, आध्यात्मिकता और सर्वोच्च आनंद को संदर्भित करता है । अग्य चक्र भैहों के बीच स्थित है, जहाँ हम तिलक लगाते हैं । अग्य चक्र मस्तिष्क और पिट्यूटरी ग्रन्थि से जुड़ा है और इंद्रियों, अंतर्ज्ञान और ध्यान का प्रतिनिधित्व करता है । विशुध चक्र मेरूदंड में गले के ताल में स्थित है । यह व्योम को संदर्भित करता है और थाइरॉइड ग्रन्थि से जुड़ा है और आत्म–अभिव्यक्ति और ऊर्जा का चिन्ह है । अनाहत चक्र हृदय से संबंधित है और मेरूदंड में हृदय के पीछे स्थित है। अनाहत चक्र संचार प्रणाली को षक्ति प्रदान करता है और योग्य रक्त चाप का प्रतिपालन करता है । मणिपुर चक्र पानी का चिन्ह है और गुर्दो से जुड़ा है । यह लसिक प्रणाली से अपषिष्ट बढ़ाता है । मूलाधारा चक्र मेरूदंड के ताल में स्थित है । यह धरती का चिन्ह है और निचले लैंगिक अंगों से जुड़ा है । आंठवा चक्र है आभा, जो शरीर को चारों ओर से घेरता है । इसलिए नृत्य और आसन की तालिम करते हुए हमें कोई विषिष्ट चक्र प्रवृत्त होने का पता चलता है और उसके साथ आते हैं उससे जुड़ा भाव और अनुरूप आध्यात्मिक और स्वास्थ्य के लाभ ।

5.6.1 मानव शरीर की 7 ऊर्जा की परतें :

मानव शरीर के बाहर ऊर्जा की परतें होती है जो हमारे हृदय के द्वारा प्रकाशमय होती है ।

कुल 7 परतें होती है जो हमारे शरीर में स्थित सात चक्रों से संबंधित है जो चक्र सिद्ध होता है उस प्रकार से शरीर के अंदर परतें बनती जाती है । हमारा शरीर सात चक्रो से जुड़ा है और इसी वजह से मानव के सात अलग–अलग शरीर माने जाते हैं जो इस प्रकार से जुड़ा है । मूलाधार चक्र भौतिक शरीर । स्वाधिष्ठान चक्र समागम चक्र जो भावनाओं से जुड़ा है । मणिपुर चक्र मानसिक शरीर । अनाहत चक्र अंतर्ज्ञान शरीर । विशुद्धाख्य चक्र आत्मा शरीर । आज्ञा चक्र मौनाद शरीर । सहस्त्रदल चक्र दिव्य शक्ति ।

5.6.1.1 मूलाधार चक्र : मूलाधार चक्र का स्थान जन्म केन्द्र है उसमें वृषण और अंडाशय होते हैं उसमें लिंग और योनि होती है जो प्रजनन प्रणाली है । कुंडलिनी शक्ति जो जीवन शक्ति की ऊर्जा है वह एक कुंडलित सर्प जैसी सोती हे उसे किसी भी तांत्रिक साधना या ध्यान द्वारा उत्तेजित करके मूलाधार चक्र से स्वाधिष्ठान चक्र तक पहुंचाती है । इसमें मूल वृत्ति, कामुकता, रचनात्मकता में बदल जाती है । इस चक्र का मंत्र ''लाम या लं'' है और हस्त मुद्रा ''पृथ्वी मुद्रा'' है और लाल रंग है । पृथ्वी मुद्रा में जो हस्त किया जाता है उसमें अनामिका की नोंक को अंगूठे की नोंक के साथ जोड़ा जाता है और बाकी तीन अंगुलियों को फैलाकर रखते हैं । इसे करने से शारिरीक कमजोरियां कम होती है ऐसा माना गया है । इस का अभ्यास किसी भी समय किया जाता है । इसके अभ्यास से वजन बढ़ता है, चेहरें पर चमक आती है और शरीर स्वस्थ और सक्रिय बनता है ।

जो भी आसन कमर की मांसपेशियों को सक्रिय करता है वह मूलाधार चक्र को खोलने में सहायता कर सकता है, जैसे कि ध्रुवासन, योद्धा की मुद्रा और वृक्षासन उसी तरह नृत्य में जो स्थानक है उसमें वैष्णव स्थानक आलिढ और

प्रत्यालिढ स्थानक करने से हो सकता है चित्र

Mooladhara Chakra

5.6.1.2 स्वाधिष्ठान चक्र : इसका केन्द्र मृत्यु केन्द्र है । अधिकवृक्क ग्रंथियो जैसा है । इसका स्थान गुर्दे और बृहदान्त्र है जहामूत्र प्रणाली है । जब कुंडलिनी स्वाधिष्ठान चक्र से निकलती है जो नाभि और लिंग के बीच जघन की हड्डी के ऊपर स्थित है तो साधन के मन में जो भय, घृणा, क्रोध, लालच और हिंसा जैसी वृत्ति या बदल जाती है और वह निर्भयता, प्रेम, करूणा, दान, अहिंसा में बदल जाती है । इस चक्र का मंत्र 'अं'/'अम्' है और मुद्रा वरूण है । वरूण यानि जल का देवता और 'अं' जल का मंत्र है । वरूण मुद्रा में हस्त को इस प्रकार किया जाता है जिसमें छोटी ऊंगली की नोंक अंगूठे की नोंक से जोड़ा जाता है । जिसमें बाकी की तीन अंगुलियों को फैलाकर रखते है । इस का ध्यान करने से पानी की मात्रा संतुलित रहती है । जिससे पानी की कमी द्वारा होने वाली बिमारियां नहीं होती । यह शरीर में पानी की मात्रा को संतुलित रखकर रक्त में स्पष्टता बनाए रखता है और गौस्टोढंटेराइटिस और मांसपेशियों के संकोचन से होने वाले दर्द को रोकता है । जिस आसन में गुदा और नाभि के बीच की जगह में खिंचवा या उत्तेजना होती है, ऐसे आसन को करने से स्वाधिष्ठान चक्र को खोलने में मदद मिल सकती है, जैसे कि पादहस्तासन आदि ।

चित्र

5.6.1.3 मणिपुर चक्र : मणिपुर चक्र सौरजाल में आया है जो अग्न्याशय और प्लीहा से संबंधित है । आंत और यकृत ग्रंथी के पास होता है और पाचन तंत्र भी वहीं होता है । कुंडलिनी जब मणिपुर चक्र से ऊपर उठती है तो साध्क के मन में संदेह और दमन जैसी प्रवृतियां बदल के वह विश्वास और अभिव्यक्ति जैसी बन जाती है । इस चक्र का मंत्र है– ''मं'' और हस्त मुद्रा ''आयान'' मुद्रा है जिसे पाचन की मुद्रा कहा गया है जिसका रंग पीला है । पृथ्वी तत्व और मूलाधार चक्र का अपान वायु से भी संबंध है । अपान मुद्रा का हस्त करने के लिए मध्यमा और अनामिका की युक्तियां अंगूठे की नोंक से जोड़ी जाती है और अन्य दो अंगुलियों को फैलाकर रखते हैं । यह हमारी उत्सर्जन प्रणाली को नियंत्रित करता है । क्योंकि यह हमारे स्वास्थ्य में एक महत्वपूर्ण कार्य करता है । इस को करने से मधुमेह नियंत्रित होता है । कब्ज और बवासीर का उपचार करता है । अपशिष्ट उत्सर्जन को नियंत्रित करता है । मणिपुर चक्र को खोलने के लिए मयूरासन, नौकासन, शलभासन, पश्चिमोत्तासन आदि आसन करने से हो सकता है ।

चित्र

5.6.1.4 अनाहत चक्र : इस चक्र का केन्द्र हृदय है । थाइमस ग्रंथि से मेल खाता है । यह हृदय और फेफडे में जो श्वसन प्रणाली को प्रभावित करता है । यह चक्र कल्पना, स्वप्न, अहंकार और प्रेम जैसी वृत्तियों में परिवर्तन करके दृढ़ संकल्प दृष्टि मिशन, सेवा और करूणा में परिवर्तित करता है । अनाहत चक्र का मंत्र जप है 'यं' और हस्त मुद्रा ''अपान वायु मुद्रा'' है। जिसे हृदय की मुद्रा भी कहा गया है । जिसका रंग हरा है । अपान वायु मुद्रा का हस्त करने के लिए मध्यमा और अनामिका की युक्तियां अंगूठे की नोंक को जोड़ती है और तर्जनी अंगूठे के आधार को छूती है और सबसे छोटी ऊंगली कनिष्ठ बाहर की और फैली होती है । इस मुद्रा को करने से हृदय की बहुत लाभ होता है और दिल के डौरें को रोकने की यह मुद्रा मदद करती है । यह मुद्रा शरीर में गैस की मात्रा को कम करती है । यह मुद्रा दिल के मरीज़ और बी.पी. को 15 मिनिट रोज़ दिन में दो बार करनी चाहिए । यह दिल को मजबूत धड़कनो को नियंत्रित करती है और उत्सर्जन प्रणाली और गैस्ट्रिक समस्या से राहत देती है । जिस आसन में पीछे की और झुका जाए ऐसे आसन करने से अनाहत चक्र को खोला जा सकता है । जैसे कि भूजंगासन, उष्ट्रासन, धनुरासन या चक्रासन ।

5.6.1.5 विशुद्धि चक्र : जिसका स्थान कंठ यानि गली में हैं । जो भाषण जैसी वृत्ति को स्पष्ट पवित्र और भक्ति की दिव्यता में परिवर्तित होती है । इस चक्र का मंत्र है ''हुं'' और हस्त मुद्रा है । ''सूर्य मुद्रा'' जिसका रंग नीला है । यह हस्त मुद्रा करने के लिए अनामिका को मोड़कर अंगूठे से दबाएं । यह थायरोइड ग्रंथि के केन्द्र को तेज करता है । यह दिन मे ही कर दो बाद 15 मिनिट अभ्यास किया जा सकता है । कोलेस्ट्रोल कम करता है, वनज कम होती है और अपचन ठीक करता है । दिए गए पांच चक्र जो पंच महाभूत जो हमारे शरीर में है – पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और ईथर यानि आकाश तत्व सामंजस्य और एकता के लिए संतुलित है । बाकी के दो चक्र अतिचेतना या ईश्वरीय तत्व के समान है । जिस आसन में गर्दन को फैला सकें ऐसे आसन करने से यह चक्र खोला जा सकता है, जैसे कि सर्वांगसन, मत्स्यासन, हलासन आदि ।

5.6.1.6 आज्ञा चक्र (अंजना चक्र) : इस चक्र का स्थान को भौंहो के बीच होता है जिन्हें हम तीसरी आंख कहते हैं । जब कुंडलिनी अंजना चक्र पहुंचती है तब ज्ञान दृष्टि, मिशन और अन्य मानसिक क्षमताओं के मूल लक्षणों को बदल कर ज्ञान, अंतदृष्टि, अंर्तज्ञान और आनंद में बदल देती है ।इस चक्र का मंत्र है – ''ओम'' और हस्त मुद्रा है ज्ञान मुद्रा और रंग है इंडिगो । ज्ञान मुद्रा को करने के लिए तर्जनी के सिरे को अंगूठे की नोंक में पिटयुटरी और अंत :स्त्राव ग्रंथियों का केन्द्र है और जब हम यह मुद्रा करते हैं तब वह उस केन्द्रो पर दबाव आता है जिस के कारण ग्रंथिया उत्तेजित होती है । इसे करने से स्मरण शक्ति बढ़ती है और दिमाग तेज होता है । एकाग्रता बढ़ती है और अनिद्रा जैसी तकलीफें नहीं होती । इसको नियमित रूप से करने से मनोवैज्ञानिक विकार जैसे की मन, हिस्टीच्या, क्रोध और अवसाद को ठीक कर सकते हैं । जिस आसन में मस्तिष्क के भाग को सक्रिय किया जा सकें वह सभी आसन आज्ञा चक्र को खोलने में मदद कर सकते हैं, जैसे कि शीर्षासन ।

5.6.1.7 सहस्त्रार चक्र : जिसका स्थान सिर का मुकुट या पीनियल ग्रंथि के ऊपर है जब कुंडलिनी सहस्त्रार चक्र में स्थानांतरित होती है तब अस्तित्व गैर अस्तित्व में बदल जाता है । जिसे 'निर्वाण' कहा गया है । इस चक्र का मंत्र ओम है और हस्त मुद्रा ''शून्य मुद्रा'' है । रंग बैंगनी है । यह अनंत और अनंत काल की पूरी वास्तविकता महसूस होती है और अस्तित्व का ब्रह्मांड के साथ विलय होता हुआ देख सकते हैं । एक अतिचेतनता का एहसास होता है जहां अतीत और भविष्य को वर्तमान रूप में देख सकते हैं यहां पर समय और स्थान द्वारा सीमित नहीं किया जा सकता । शून्य मुद्रा को करने के लिए शुक्र के पर्वत पर मध्यमां ऊंगली रखी जाती है और उसे अंगूठे से दबाया जाता है । यह करने से इससे शरीर की सुस्ती कम होती है इसका अभ्यास रोज 40 मिनिट से 60 मिनिट तक किया जा सकता है । यह हस्त करने से 4 से 5 मिनिटों में कान का दर्द दूर होता है । जो लोग सून नहीं सकते या मानसिक रूप से विकलांग है उनको यह हस्त मुद्रा उपयोगी है । इस मुद्रा को भगवान श्री कृष्ण, भगवान बुद्ध और जिसस क्राईस्ट भी धारण किया था । आधुनिक विज्ञान में इसे सातवें अर्थ का जागरण माना जाता है । जो भी मुद्रा सिर के मुकुट क्षेत्र को पोषित करती है वह इस चक्र को खोलने में सहायता कर सकती है ।

5.6.2 चक्रो का मानवीय शरीर और भावनाओं पर असर : ऐसा माना गया है कि मानव शरीर के पास 3 (तीन) दिमाग है । जिन में से एक दिमाग सोचने के लिए, एक दिमाग भावनाओं के लिए और एक समागम ऊर्जा से जुड़ा है । इन 3 (तीन) दिमागों का विभाजन में पांच नीचे दिमाग है और 2 (दो) उच्च दिमाग है । अंजना चक्र के केन्द्र में सोच दिमाग कार्य करता है जिसका केन्द्र विचारों से बनता है जिसका संबंध प्यार से होता है । मणिपुर चक्र : सोचने वाले दिमाग से 10 गुना तेज भावुक केन्द्र है जो पेट में हैं जिसे मणिपुर चक्र कहते हैं । जो भावनाओं के साथ व्यवहार करता है जो भावनाओं से प्यार करता है । इसमें सुख, दुःख, हंसना आदि भावनाओं से जुड़ा है । विशुद्धाख्य चक्र : यह चक्र गर्दन में स्थित है । इसमें बाकियों की तुलना में 10 गुना तेज वासना महसूस होती है जिसके कारण बहुत हाथ चलाना, जल्दी और गलत बोलना जिसे ऐसे शरीर के विचारों से प्रभावित होता है । मूलाधार चक्र : इस चक्र के स्थान पर ही कामवासना का निवास स्थान है । इसको शुद्ध करें तो व्यक्ति पवित्र प्रिय हो जाता है । इसका कारण यह है कि व्यक्ति की ओजस में तब नारायण प्रवेश हो जाते हैं । यह चक्र शुद्ध ना हो तो इससे बर्बर आंदोलनो का निमंत्रण होता है । क्रोध आना, डर लगना, भग जाना, लड़ाई करना इस प्रकार की वासनाएँ निकलती है । कई बार लोग ऐसे ही झगड़ते हैं क्योंकि यह केन्द्र उनका द्रिग होता है । ऊपर के पांच चक्र नीचे दिमागों में आते हैं बाकी के दो में । पहला सहस्त्रार है जो श्रेष्ठ बुद्धि भी कहा गया है । जिसका स्थान सिर के ऊपर है जो सही या गलत का भेदभाव करने के लिए इसका

उपयोग होता है । और दूसरा है हृदय में यानि अनाहत चक्र जो अंतरज्ञान के लिए उपयोगी है और प्रेम की भावना को व्यक्त करने के लिए । मणिपुर चक्र चक्रो के ध्यान से होने वाले फायदे या चक्रो के ध्यान का माहत्मय :

5.6.2.1 मूलाधार चक्र के ध्यान से प्राप्त होने वाली सिद्धियाँ : मूलाधार चक्र का ध्यान करने से वाक्य–काव्य–प्रबंध आदि पर दक्षता सिद्ध होती है । शरीर में उत्पन्न होने वाले तीन रसों का परिचय मूलाधार चक्र के विवरण में बताया गया है कि चतुर्विध अन्न खाने से तीन प्रकार के रसो की उत्पत्ति होती है । जिसमें से प्रथम रस सारभूत रस है वह लिंग शरीर का पोषण करता है । दूसरा जो रस है वह सप्तधतुमय पिंड का पोषण करता है और तीसरे प्रकार का र समल–मूत्र द्वारा बाहर निकल जाता है । प्रथम और द्वितीय रस ही पूरा नाड़ीरूप है वह पाद से शुरू होकर मस्तक तक शरीर के वायु का पोषण करता है । जब सभी नाड़िओं के साथ वायु गति करता है तब अन्नरस शरीर में समांतर प्रवृत्त होता है । शरीर में मुख्य चौदह नाड़ियाँ होती है ।) सुषुम्णा , ईडा , पिंगला, गांधारी , हस्तजिहवा ,कुह, सरस्वती, पूषा , शंखिनी , प्यस्विनी, वरूणा, विश्वादरी , यशस्विनी । यह शरीर का मुख्य व्यापार करती है । मूलाधार चक्र के ध्यान करने से प्राप्त होने वाली सिद्धियाँ : मूलाधार चक्र के ध्यान से दार्दुरी सिद्धि प्राप्त होती है । यही कारण से वह भूमि का त्याग करके आकाश की और जा सकती है । साधक तेजस्वी बनता है उसकी जठराग्नि प्रदीप्त होती है । आरोग्य प्राप्त करता है और उसे भूत, भविष्य और वर्तमान की जानकारी होती है । सभी वस्तुओं के कारण का ज्ञान होता है और जो शास्त्र कभी सुने ना हों उसका रहस्य प्राप्त होता है और उसे बताने की शक्ति भी प्राप्त होती है । ऐसे योगीओ के मुख पर हंमेशा सरस्वती देवी नृत्य करती है । जप करने से ही मंत्र सिद्ध हो जाते हैं । जिस क्षण योगी मूलाधरपद्यम में स्थित स्वयंभूलिंग को ध्यान करता है उसी क्षण उसके पापो का नाश हो जाता है । उसकी सभी इच्छा पूर्ण होती है । परमात्मा के दर्शन होते हैं ।

5.6.2.2 स्वाधिष्ठान चक्र के ध्यान से प्राप्त होने वाली सिद्धियाँ । स्वाधिष्ठान चक्र के ध्यान में कामांगना काममोहित होता है और सेवा करता है । अलग–अलग शास्त्र जो कभी सुने भी ना हों फिर भी सभी का रहस्य वाणी के द्वारा कह सकते हैं । सभी रोगों से मुक्त होकर संसार में सुखी होकर रह सकते हैं । इस चक्र का ध्यान

करने से मृत्यु का नाश होता है । सुषुम्णा नाड़ी में वायु संचार करता है । रस की वृद्धि होती है और सहस्त्रदलयद्यम जो अमृत बरसाता है उसकी भी वृद्धि होती है ।

5.6.2.3 मणिपुर चक्र के ध्यान से प्राप्त होने वाली सिद्धियाँ : मणिपुरचक्र का ध्यान करने में सर्वसिद्धिदायी पातालसिद्धि प्राप्त होती है । सभी दुःखों का नाश होता है और सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं । वह काल को भी वंचित कर सकता है । परकाया प्रवेश करने की शक्ति प्राप्त होती है । ऐसा योगी सोना (सुवर्ण) भी बना सकता है । वह देव, निधियां और औषधियों का भी दर्शन कर सकता है ।

5.6.2.4 अनाहत चक्र के ध्यान से प्राप्त होने वाली सिद्धियाँ : इस चक्र के ध्यान से साधक पर कामोर्ता सुन्दर स्त्री, अप्सरा आदि मोहित होती है । साधक को अपूर्व ज्ञान की प्राप्ति होती है वह त्रिकालदर्शी होता है । उसे सुनने और दूरदर्शन करने की शक्ति प्राप्त होती है । अपनी इच्छा से आकाश का विहार कर सकता है । वह देव और योगीओं का दर्शन भी कर सकता है । खेचरी और भुचरी की सिध्धि भी प्राप्त करता है । अनाहत चक्र को ध्यान का महात्मय कोई भी कह नहीं सकता । इस ध्यान को ब्रह्मादि देवताओं ने गोपनीय रखा है ।

5.6.2.5 विशुद्धि चक्र के ध्यान ध्यान से प्राप्त होने वाली सिद्धियाँ : इस चक्र का ध्यान जो करता है उसे योगीश्वर पंडित कहा गया है । इस चक्र के ध्यान से वेदों का रहस्य प्राप्त होने के साथ–साथ समुद्र के रत्नवत् प्रकाश को प्राप्त होता है । विशुद्धारूप चक्र में जब योगी मन और प्राण को स्थिर करके क्रोध करता है । तब त्रैलोक्य कम्यायमान होता है । इस के ध्यान से योगी का शरीर वज्र के समान कठोर होता है ।

5.6.2.6 आज्ञा चक्र के ध्यान से प्राप्त होने वाली सिद्धियाँ : आज्ञा चक्र को ध्यान करने वाला योगी राजयोग शिवस्वरूप होता है । पूर्व जन्म के सभी कर्मो का नाश होता है । यक्ष, राक्षस, गन्धर्व और अप्सरा, किन्नर आदि सब ध्यान करने वाले योगी के वश में आ जाते हैं । लेकिन यह ध्यान करते समय जिहवा उर्ध्वमुखी रखनी चाहिए । आज्ञा चक्र का ध्यान करने से पहले के पांच चक्रो का फल भी इसी के ध्यान करने से प्राप्त हो जाता है । इस चक्र के ध्यान से योगी वासना के बंधन से मुक्ति पाता है और वह राजयोग का अधिकारी बनता है ।

5.6.2.7 सहस्त्रदल चक्र के ध्यान से प्राप्त होने वाली सिद्धियाँ : सहस्त्रदलयद्यम में आने वाले ब्रह्मरंघ्र का ध्यान करने से मोक्ष की प्राप्ति होती है ।

इन सात चक्रो के अलावा और दो गौवा चक्र मनश्रचक्र के छः दल है । जिनमें से पांच दल में शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध है और छठा दल स्वप्नगत अनुभव और संभ्रमगत ज्ञान है । सोमचक्र मनश्रचक्र से ऊपर माना जाता है जिनमें सोलह पंखडीया होती है । इस चक्र में समाधिसिद्ध महापुरूषों का मन होता है ।

5.6.3 चक्रो के ध्यान करने की प्रक्रिया : चक्र शरीर के पृष्ठ भाग में आए हुए हैं । उनकी सीमा शरीर के आगे के हिस्से में ही व्याप्त है । जब अयान वायु ऊपर उठता है तब चक्रभेदश होता है और उस समय पृष्ठवंश में चक्रो के स्थान का बोध होता है । चक्रो का ध्यान दो तरीके से किया जाता है – पहला तरीका है चक्रो की पंखुडियां अक्षर और देवो का ध्यान करना । इस ध्यान में सिर्फ देवो का या पंखुडियों का ध्यान भी कर सकते हैं । दूसरे तरीके में मात्र ध्यान केन्द्र में चित्तवृत्ति को स्थिर करके अनुभव को ही प्राप्त करना होता है । चक्रो का ध्यान सिद्धासन, पद्मासन, स्थिरासन, प्रौढ़ासन, स्वस्तिकासन में बैठकर सीवनी को दबाए बगैर थेड़ा दूर रखकर स्वस्थ बैठना होता है । दृष्टि को नासाग्रह में स्थिर करनी चाहिए । चक्रो को ध्यान में कंठ ध्वनि के साथ दीर्घ प्राणायाम ही करना चाहिए । नासारंघ्रो को दबाऐं बगैर ही क्रमशः रोचक, पूरक और कुंभल करना चाहिए । इस प्रकार चक्रो का ध्यान करना चाहिए । प्रत्येक चक्रो के ध्यान सिखने के बाद उसे सात दिनो तक हर रोज करना चाहिए ।

जाहिर है हम योग अभ्यासियों और नर्तकियों के रूप में मन के सात्विक गुणों को अधिकतम करना चाहते हैं और तामसिक और राजसिक गुणों को कम करना चाहते हैं । आसन औन नृत्य की कला के माध्यम से हम शरीर और मन के बीच प्राण प्रवाह को बढ़ाने और स्थिर करने के लिए शरीर में हेरफेर करते हैं । जब वह प्रवाह स्थिर होता है तो आसन और नृत्य हमें स्फूर्ति प्रदान करते हैं, आलस्य और भारीपन को दूर करते हैं । जब हमारा प्रवाह बाधित होता है तो हम तनावग्रस्त और उत्तेजित होते हैं । आसन और नृत्य हमें आराम करना और खुद को केंद्रित करना सिखाते हैं ।

संक्षेप में आसन और नृत्य सत्व को बढ़ाते हैं और जीवन शक्ति को स्थिरता, संतुलन और ध्यान के क्षेत्र में निर्देषित करते हैं । इस प्रकार योग और नृत्य दोनों ही सुंदर विद्याएं तन और मन को प्रशिक्षित करती है ।

सबसे स्पष्ट दिखने वाला निरूपण आसन, जहाँ शरीर की मुद्राएँ होती है । सभी नृत्य प्रकारों में उनके अपने अनूठे ढंग में शरीर की मुद्राओं का उपयोग होता है, जिससे वह नृत्य प्रकार अद्वितीय बनता है । शरीर के बारे में अधिक जागृतता, बहतर समन्वय, बहतर प्रतिक्रिया समय एवं स्मृति प्रतिधारण–यह सारे नृत्य के अभ्यास के परिणाम है जो स्वस्थ शारीरिक अवस्था प्रदान करते हैं । भारतीय तत्वज्ञान के अनुसार कई प्रकार से नृत्य स्वयं योग है क्योंकि योग और नृत्य दोनों श्वसन और शरीर की गति से या श्वास–निर्देषित गति से सम्बद्ध है । जटिल शारीरिक मुद्राओं, हाथ की मुद्राओ और भावनाओं की प्रस्तुति में योग की एकाग्रता आवष्यक होती है जो नृत्य एवं नृत्य के आंदोलनों से भी सम्बद्ध है। शरीर और मन की एकता योग और नृत्य दोनों में जरूरी है ।

इस तरह यह अध्याय में योगाभ्यास द्वारा चिकित्सा तथा नृत्य द्वारा चिकित्सा का वर्णन करने की कोशिश की गई है जिसमें योग चिकित्सा और नृत्य चिकित्सा मानवीय शरीर पर तथा मन पर किस प्रकार कार्य करती है वह योग के आसन मुद्रा तथा नृत्य में प्रयास किया है । योग प्रक्रिया द्वारा योग चिकित्सा का मानव शरीर तथा मन पर सकारात्मक प्रभाव समझाने का प्रयास किया है । नृत्य की अलग–अलग स्थिति जैसे की मण्डल, चारी, स्थानक तथा योग के विविध आसन करते समय शरीर की जो स्थिति होती है उनमें तुलना करने का प्रयास किया गया है । इस अध्याय से भविष्य में कई सारे लोगों को योग और नृत्य द्वारा चिकित्सा होने की संभावना देखी जा सकती है ।

शोधकर्ता को यह पूर्ण विश्वास है की इस कार्य को पूर्ण करने के लिए जिन–जिन विद्वानों ने मुझे मार्गदर्शन दिया है उसकी फलवृत्ति नृत्य जगत में किसी सकारात्मक रूप में मिलेगी । यह कार्य नृत्य जगत में छोटी–बड़ी समस्याओं का निदान पाने के लिए या शरीर, मन, मानस से झुड़ी व्याधिओं की चिकित्सा के स्वरूप में उपयोगी साबित हो सकती है ।